लड़कों की ख़ुशहाली का शर्तिया नुस्ख़ा - 4

प्यार पाना है तो लड़कियों का दिल भी न दुखाना

नासिरूद्दीन

© नासिरूद्दीन व सीएचएसजे, 2015

इस पुस्तक से जुड़े सभी अधिकार लेखक और प्रकाशक के पास सुरक्षित हैं। इस पुस्तक का कोई भी हिस्सा किसी भी रूप में बिना लेखक और प्रकाशक की इजाज़त के इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है।

सीमित और निजी वितरण के लिए।

कवर व अन्य रेखांकनः **गोपाल शून्य**

लेआउट डिजायनः **नासिरूद्दीन**

प्रकाशकः

सेंटर फॉर हेल्थ एंड सोशल जस्टिस (सीएचएसजे)

बेसमेंट, यंग वीमेंस हॉस्टल नम्बर-2, बैंक ऑफ इंडिया के नजदीक

एवेन्यू-21, जी ब्लॉक, साकेत, नई दिल्ली-110017, भारत

टेलीफोनः +91-11-26535203, +91-11-26511425, **फैक्सः** +91-11-26536041

ईमेल आईडीः chsj@chsj.org

वेबसाइटः www.chsj.org

मुद्रणः **दृष्टि प्रिंटर्स,** मोबाइलः 9810529858, 9810277025

लड़कों की ख़ुशहाली का शर्तिया नुस्ख़ा–4

प्यार पाना है, तो लड़कियों का दिल भी न दुखाना

चेतावनी: ये किताब लड़कों और मर्दों के लिए है

परिकल्पना व लेखन

नासिरूद्दीन

उन सभी मर्दों के नाम
जो लड़कियों को
अपनी आदत और फ़ितरत से
परेशान नहीं करना चाहते हैं

अंदर के पन्नों पर

1. *यह किताब क्यों?*
2. *हम लड़के क्यों बदलें?*
3. *लड़कियों के साथ जीना सीखना पड़ेगा*
4. *हिंसा को समझें, हिंसा से तौबा करें*
5. *मन पर वार करती है हिंसा*
6. *जानें, काम की जगह पर कैसे रहें*
7. *क़ानून से डरें नहीं, महिलाओं का सम्मान करें*
8. *ख़ुशियों के लिए साझेदारी और भागीदारी ज़रूरी है*

यह किताब क्यों?

सभ्य समाज के क़ायदे वही नहीं होंगे जो बर्बर समाज के होते हैं। वैसे, हम भी सभ्य समाज में रहते हैं। इसके क़ायदे क्या हैं? क्या कुछ अलग बात है?

यह मुल्क जिस किताब से चलती है, उसे संविधान कहते हैं। संविधान कहता है कि इस देश में रहने वाला हर नागरिक बराबर है। संविधान की नज़र में सभी नागरिक इंसान हैं। वह इंसानों के बीच किसी भी तरह की ग़ैरबराबरी को ग़लत और ग़ैरक़ानूनी मानता है। इसका मतलब है इस मुल्क में रहने वाले सभी स्त्री-पुरुष-ट्रांसजेण्डर बराबर हैं। इनके बीच या इनके साथ किसी तरह का भेदभाव या ग़ैरबराबरी जुर्म होगा।

इसके बाद भी यह जुर्म हो रहा है। ज़्यादातर हम मर्द उन्हें अपने तरह का इंसान मानने से भी इंकार करते हैं। हम स्त्रियों और ट्रांसजेण्डर को दूसरे दर्ज़े का नागरिक समझते हैं। अगर हम अपने को सभ्य देश के सभ्य नागरिक कहते और मानते हैं तो ये सब नहीं चलने वाला।

घर या घर से बाहर लड़कियाँ/ स्त्रियाँ/ ट्रांसजेण्डर, हम पुरुषों के खेलने की चीज़ नहीं हैं। वे जीती-जागती इंसान हैं। उन्हें भी वे सब हक़ हैं, जो इस मुल्क में हम पुरुषों को हैं। इसके बाद भी अगर हम मर्द, स्त्री जाति को इंसान नहीं मानते और उनके साथ इंसानों जैसा सुलूक नहीं करते तो यह हमारी मर्ज़ी है। इसके बाद संविधान की मर्ज़ी चलेगी। क़ानून की मर्ज़ी चलेगी।

... तो जनाब घर के अंदर या बाहर लड़की या स्त्री के साथ किस तरह का सुलूक जुर्म होगा, क्या क़ानून इसके बारे में भी कुछ कहता है?

अगर कहता है तो क्या कहता है संविधान या क़ानून?

देखिए, संविधान कहता है,

- *कानून के सामने सब बराबर हैं- राज्य, भारत के राज्यक्षेत्र में किसी भी व्यक्ति को समानता अथवा समान कानूनी संरक्षण के लिए मना नहीं करेगा। [**अनुच्छेद 14**]*
- *सिर्फ़ धर्म, वंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर भेदभाव नहीं होगा। [**अनुच्छेद 15 (1)**]*
- *महिलाएँ और बच्चों के हक में राज्य विशेष कानूनी उपाय कर सकता है। [**अनुच्छेद 15 (3)**]*
- *किसी भी नागरिक को धर्म, वंश, जाति, लिंग, पीढ़ी, जन्मस्थान, आवास या इनमें से किसी भी आधार पर राज्य सरकार के अधीन किसी भी रोज़गार के लिए अयोग्य नहीं माना जाएगा या उसके साथ भेदभाव नहीं बरता जाएगा। [**अनुच्छेद 16**]*

जी, संविधान और इस देश का क़ानून इसके अलावा भी बहुत कुछ कहता है। वह घर के अंदर और घर के बाहर स्त्रियों के साथ होने वाली हर बदसुलूकी का हिसाब ले सकता है। कई बार यह भी मुमकिन है कि जिन्हें हम सामान्य बातें मानते हों, वह क़ानून की नज़र में असमान्य हों और स्त्रियों के सम्मान के ख़िलाफ़ हों।

बेहतरी और ख़ुशहाली का रास्ता इसी में है कि हम जानें, स्त्रियों के साथ घर के अंदर या बाहर अब हम क्या नहीं कर सकते हैं। क़ानून की नज़र में क्या-क्या नाक़ाबिले बर्दाश्त है? ध्यान रहे, ये स्त्री कोई भी हो सकती है- माँ, बेटी, बहन, भाभी, पार्टनर, दोस्त या कोई बिना जान पहचान वाली। इसलिए वाक़ई में अगर हम ख़ुशहाल ज़िंदगी चाहते हैं तो सबसे पहले कम से कम ये पाँच काम जरूर करें-

- लड़की या स्त्री के साथ कोई भी वैसा काम न करें जो हमें अपने लिए पसंद न हों।
- किसी भी लड़की या स्त्री के साथ वह न करें जो हम अपने घर की किसी महिला साथी के साथ होता देखना पसंद नहीं करेंगे।
- किसी भी लड़की या महिला की इच्छा के ख़िलाफ़ हम कुछ न करें। उसे भी उसके मन की करने दें।
- किसी भी लड़की या स्त्री पर हम अपनी मर्ज़ी न थोपें। किसी लड़की या महिला के किसी बात को मना करने पर उसे ***न*** ही मानें।
- हम घर के अंदर और बाहर - स्कूल, कॉलेज, सड़क, दफ्तर या काम करने की कोई जगह, ऑटो, बस, ट्रेन में लड़कियों और स्त्रियों को न सिर्फ बराबर की जगह दें बल्कि उनका सम्मान करें।

आगे कुछ और बातें भी हैं। अगर हम ने उन पर अमल किया तो ख़ुशहाली की गारंटी है। ये काम हम अपने लिए कर रहे हैं, किसी लड़की या स्त्री के लिए नहीं। इससे हमारी इंसानियत में चार चाँद लगेगा। तो पढ़ते हैं। अमल करते हैं और फायदा उठते हैं।

हाँ, अच्छा लगे तो हमें दूसरे साथी मर्दों को भी इसके बारे में ज़रूर बताना चाहिए।

नासिरूद्दीन

हम लड़के क्यों बदलें?

आख़िर हम लड़कों को क्यों बदलना चाहिए? हम मर्दों को तो कोई समस्या है नहीं? यह हमारा सच हो सकता है। मगर कहीं हम लड़कों के व्यवहार और आदत की वजह से समाज में कुछ समस्या तो नहीं हो रही है? सोचने की बात यह भी है कि क्या हमें ज़िंदगी के किसी मोड़ पर कोई समस्या नहीं है? क्या हम दबाव या तनाव में नहीं आते हैं? क्या हमारे तनाव या दबाव का रिश्ता हमारी आदत और फ़ितरत से है? हम इस पर ग़ौर करते हैं। तब तक कुछ और बात की जाए।

एक-दो बातों की कल्पना करते हैं। कल्पना करते हैं, एक दफ़्तर या कोई जगह है। यहाँ हम काम करते हैं। हर महीने हमें एक तय वक़्त पर तनख़्वाह मिलती है। इसके एवज़ में हमें सुबह से शाम तक काम करना पड़ता है। हमारा मालिक या बॉस हमसे काफ़ी कम बातें करता है। हमें जब न तब डाँटता रहता है। अक्सर वह हमारे काम में जबरन मीनमेख निकालता है। हमारे काम से नाख़ुश रहता है। मालिक समय-समय पर अहसास भी कराता है कि उसके साथ हम कितने ख़ुश हैं। वह यह भी हमसे कहता है कि उसने जो हमारे लिए किया वह कोई और नहीं कर सकता है।

हम भी उससे बहुत ख़ुश नहीं रहते हैं। गाहे-ब-गाहे दोस्तों से उसकी शिकायत व बुराई भी करते हैं। लेकिन जब हम बॉस या मालिक के सामने जाते हैं तो क्या हम अपनी नाख़ुशी या उसकी बुराई लेकर जाते हैं? नहीं न। हम अपना चेहरा-मोहरा ठीक करते हैं। मुस्कुराहट लाते हैं। कोशिश

होती है कि बॉस के सामने वही बात करें, जो उसे पसंद हो। क्यों? है न?

अब हम अपने घर में देखें। क्या घर में रौबदाब वाला कोई शख़्स है? होगा ही। ज़्यादातर यह वह शख़्स होता है जो कमा कर लाता है। उसके आते ही घर में मुर्दा शांति छा जाती है। उछल-कूद बंद हो जाती है। सब उसके सामने आने से बचते हैं। वह बात-बात में नाक-भौं सिकोड़ता है। गुस्सा करता है। मीनमेख निकालता है। कई बार वह हाथ भी उठाता है। हालाँकि कई बार वह हमसे खेलता भी है। हँसाता भी है। यह सब तब ही होता है, जब उसका मन करता है। हम कई बार उससे कुछ कहना चाहते हैं पर कह नहीं पाते। हम नाख़ुश नहीं हैं पर बहुत ख़ुश भी नहीं।

पता नहीं क्यों? वह कई मौक़ों पर हमें बताता रहता है कि हमारे लिए उसे क्या-क्या करना पड़ता है। वह यह भी याद दिलाता रहता है कि हम उसी की वजह से कितने ख़ुश हैं। जब वह पूछता है तो हमारे मुँह से हमेशा निकलता है - अच्छे हैं। हम कोशिश करते हैं कि वही बात करें जो उसे पसंद है। जबरदस्ती मुस्कुराते रहते हैं। उसके ख़ुश होने का इंतज़ार करते रहते हैं।

अब ज़रा सोचते हैं, कहीं ये सब हमारे आसपास तो नहीं हो रहा है। क्या हमारे घर में कहीं हमारी वजह से तो ऐसा कुछ नहीं होता है? कहीं हम अपने घरों में दुकान मालिक या बॉस की

तरह तो नहीं व्यवहार करते हैं? कहीं हमें मालिक या बॉस तो नहीं समझा जाता है? कहीं हमारा व्यवहार कुछ लोगों और ख़ास कर घर की लड़कियों और महिलाओं के लिए नौकर या कर्मचारी जैसा तो नहीं है? कहीं मजबूरी में या ख़ौफ़ से वे हमारे सामने सुखी या ख़ुश होने का दिखावा तो नहीं करते हैं? या सुखी तो हों पर उन्हें मोहब्बत की तलाश हो? सोचिए... सोचने में हर्ज़ नहीं।

दो आदमज़ात हैं। क़ुदरत ने एक को स्त्री बनाया और दूसरे को पुरुष। क़ुदरत यहीं तक फ़र्क़ कर रहा है। उसका फ़र्क़ शरीर के कुछ अंगों तक सीमित है। शरीर के उन अंगों में उसने फ़र्क़ नहीं किया जिसके आधार पर कोई अपनी श्रेष्ठता साबित कर सकता है।

श्रेष्ठता का एक बड़ा पैमाना है, दिमाग़। दिमाग़ का रिश्ता इस बात से है कि उसका इस्तेमाल कितना होता है या करने दिया जाता है। यह इस्तेमाल इस बात पर भी निर्भर करता है कि हम समाज के किसी हिस्से को किस रूप में अपने बीच जगह देते हैं। अगर हम किसी को दबा कर रखना चाहते हैं या किसी पर हुक़ूमत करना चाहते हैं तो उसके दिमाग़ को चलने का बहुत मौक़ा नहीं देते हैं। उसके लिए सोचने का काम हम करते हैं। हम उसके दिमाग के चलने का दायरा तय कर देते हैं। हम अपने समाज में सदियों तक हाशिए पर पड़े दलितों-आदिवासियों के लिए यह दायरा देख सकते हैं। इसकी निशानियाँ आज भी हमारे बातचीत में मिल जाती हैं, जब कोई कहता है, *ये पढ़ नहीं सकते। ये दिमाग़ का काम नहीं कर सकते। ये सरकार नहीं चला सकते। ये सब इनके बस का नहीं है।* ये सारी बातें हम किसी भी दलित-आदिवासी नेता या बड़ी शख़्सीयत के बारे में सुन सकते हैं। या हम यह भी सुन सकते हैं कि *यह काम तो फलाँ लोग ही कर सकते हैं क्योंकि फलाँ, फलाँ जाति का है। फलाँ जाति ही सरकार चला सकती है या शासन कर सकती है।*

दो सौ साल तक हम अंग्रेज़ों के ग़ुलाम रहे। अंग्रेज़ भी हमारे बारे ऐसे ही तर्क देते थे। उनकी राय किसी ख़ास जाति या समुदाय के बारे में नहीं बल्कि सभी भारतीयों को बारे में थी। भारतीयों में भी ऐसे कई लोग थे, जिन्हें लगता था कि अंग्रेज़ श्रेष्ठ हैं। क्यों? क्योंकि यही ग़ुलाम मानसिकता है। इसने हम में से कुछ लोगों को ऐसा बना दिया था कि उन्हें ग़ुलामी भी अच्छी लगने लगी। वे उसे सराहने भी लगे।

ठीक इसी तरह हम ने लड़कियों का सामाजिक दायरा तय किया। सदियों से लड़कियाँ उसी दायरे में रहीं और अब भी हैं। उनके दिमाग़ या सोच-समझ का दायरा बाँध दिया गया। वे वही सोचती या करती रहीं हैं, जो समाज का मर्दिया सोच चाहता है। बीच-बीच में ऐसे उदाहरण मिल जाते हैं, जिन्होंने दायरे को तोड़ा। हालाँकि इससे स्त्रियों के दिमाग़ के बारे में समाज के बड़े हिस्से की राय नहीं बदली।

उपयोगिता के लिहाज़ से लड़कियों के दिमाग़ की उपयोगिता तय कर दी गई। वह पढ़ेगी लेकिन उसकी वजह वही नहीं होगी जो लड़के के पढ़ने की होगी। वह बाहर निकलेगी लेकिन उसके आने-जाने पर नियंत्रण कोई और करेगा। वह वैसे ही आज़ाद ख़्याल होकर नहीं निकलेगी जैसे हम लड़के निकलते हैं। वह घर में रहेगी लेकिन वैसे ही नहीं रहेगी जैसे हम मर्द रहते हैं।

सदियों तक जैसे दलित-आदिवासियों को यह भरोसा या यक़ीन दिलाया गया कि उनकी बदतर हालत इसलिए है क्योंकि उनकी नियति में यही बदा है। किसी नामालूम ताक़त ने उनकी क़िस्मत नाम की चीज़ ऐसे ही लिखी है। या सदियों तक जैसे हमें भरोसा दिलाया गया कि ग़ुलामी हमारी क़िस्मत का हिस्सा है। अंग्रेज़ हमारी नियति बदलने आए हैं। हमें सभ्य बनाने आए हैं। कुछ-कुछ इसी तरह लड़कियों को भी यह भरोसा दिलाया गया कि उनकी नियति यही है। वे लड़की हैं, इसलिए उन्हें दबना और सहना है। यही नहीं, हम मर्द तय करेंगे कि लड़कियों के लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा। हम ही उसकी भलाई सोचने वाले हैं।

हम मर्दों ने लड़कियों के साचने के लिए क्या दायरा तय किया? लड़की होने का मतलब है- सेवा करना। अपनी चाहत को दबाना। दूसरों पर अपना सब कुछ न्योछावर कर देना। बिना पुरुष के अपने जीवन को व्यर्थ मानना। पुरुष चाहे जिस रूप में हो, वही उसका कर्ता है। इसलिए उसकी बात ही सबसे ऊपर रहेगी। उसकी ज़िंदगी दो घरों के बीच बँट जाएगी। जहाँ वह पैदा हुई है, वह उसकी मंजिल नहीं बल्कि छोटा पड़ाव है। ठहराव तो कहीं और मिलना है। उस ठहराव में उसे रोटी-कपड़ा और छत चाहिए। भला ऐसी हालत में वह अपनी शख़्सीयत के बल पर खम ठोककर कैसे रह सकती है? अधिकतर नहीं रह पातीं हैं।

इसके बाद हम कहते हैं कि लड़कियाँ सोच नहीं पातीं। वे दुनियादारी नहीं समझतीं। उनमें संकट से जूझने का माद्दा नहीं होता। उनका दिमाग़ नहीं चलता। वगैरह... वगैरह...।

ख़ैर। अब हम ज़रा भूमिका बदल लेते हैं। इतने दायरे और बंधन में अगर हम मर्दों को बचपन से रहना पड़े तो यह देखना दिलचस्प रहेगा कि हमारा दिमाग़ कितना और किस तरह काम करता है। ज़रा सोचते हैं, लड़की की जगह अगर यह सब किसी लड़के के साथ हो तो उसका मन क्या करेगा? क्या वह बहुत ख़ुश रहेगा? क्या वह ख़ुद को सुखी कह पाएगा? अगर जवाब *हाँ* है तो कोई बात ही नहीं। अगर जवाब *नहीं* है तो क्या हम लड़कों को नहीं सोचना चाहिए कि हमारा सुख, हमारा आराम, हमारा हुक्म किसी की ज़िंदगी को कैसे परेशानकुन बना रहा है?

यह कैसे मुमकिन है कि एक ही छत के नीचे, दो प्राणि रह रहे हों और दोनों की हैसियत अलग-अलग हो। एक सुनाने के लिए और दूसरा सुनने के लिए। एक काबू में रहने के लिए और दूसरा काबू के क़ायदे तय करने के लिए। ये प्राणि भाई-बहन हो सकते हैं। मियाँ-बीवी हो सकते हैं। बाप-बेटी हो सकते हैं। माँ-बेटी हो सकती हैं। सास-बहू हो सकती हैं। घर और परिवारीजन के दायरे में रह रही किसी लड़की के बारे में सोचिए...।

सवाल है कि अगर दोनों को क़ुदरत ने इंसान के रूप में जन्म दिया है तो यह ग़ैरबराबरी लड़कियों के साथ क्यों है? अगर लगभग आधी आबादी ग़ैरबराबरी के दायरे में रखी जाएगी या उसकी तरक्की नियंत्रित तरीके से होगी तो कोई समाज अपने आपको तरक्कीयाफ़्ता कैसे कह सकता है?

लड़कों के साथ न तो ऐसी पाबंदी है, न ही उन्हें दायरे में क़ैद रहना पड़ता है और न ही उन्हें अपनी स्थिति से तक़लीफ़ है तो उन्हें क्यों बदलना चाहिए? क्योंकि यह साफ़ है कि लड़कियों के साथ ग़ैरबराबरी की बड़ी वजह हम मर्द और मर्दिया व्यवस्था है। इसे पितृसत्ता भी कहा जाता है। इसलिए हमें, हमारी सोच और हमारी यानी मर्दों की व्यवस्था को बदलना होगा। ये ग़ैरबराबरी की व्यवस्था न महिलाओं के ख़िलाफ़ है बल्कि यह संविधान के ख़िलाफ़ है और ग़ैरक़ानूनी भी है।

कहा जाता है, घर या समाज की गाड़ी का एक पहिया लड़का और दूसरा लड़की है। अब अगर किसी गाड़ी का एक पहिया बड़ा और एक छोटा हो तो ... अगर किसी एक गाड़ी का पहिया टूटा हुआ हो तो ... क्या गाड़ी आराम से चलेगी? क्या गाड़ी सरपट दौड़ेगी? जवाब शायद नहीं होगा। अब हमें तय करना है कि गाड़ी आराम से चलानी है या नहीं। गाड़ी सरपट दौड़ानी है या नहीं।

यही नहीं दिल की ख़ुशी का रिश्ता रूह की ख़ुशी से है। मुमकिन है, कुछ को यह ख़ुशी पैसे या सामान से मिलती हो लेकिन सबके साथ ऐसा नहीं है। वैसे भी ऐसी ख़ुशी बहुत लम्बे वक़्त तक नहीं रहती। घर को ख़ुशनुमा बनाने के लिए पैसे या सामान से पहले, ख़ुशनुमा माहौल बनाना होता है। ऐसे माहौल में ही बेहतर इंसान बन सकता है। हमेशा तनाव, मुर्दनी, ख़ौफ़, आशंका का साया, दिल के लिए अच्छा है न दिमाग़ के लिए। घर में हमेशा अगर ऐसा साया है तो कोई सुखी और ख़ुश नहीं रह सकता। मर्द भी नहीं। ज़रा हम अपनी ज़िंदगी में झाँकें, कहीं कुछ ऐसा है या नहीं।

यह मुमकिन नहीं कि हमारे शरीर का एक अंग अगर तकलीफ में हो या चोटिल हो या काम न करे और इसके बाद भी हम सुखी और ख़ुश रहें। उसी तरह घर या समाज का एक हिस्सा ख़ुश न हो, ग़ैरबराबरी का शिकार हो या दबा कर रखा गया हो तो क्या हम सुखी या ख़ुश रह सकते हैं। अगर हम किसी शख़्स, व्यक्ति, जाति, समूह की ऐसी हालत से ख़ुश हैं या सुखी हैं तो हमें अपने इंसान होने के बारे में गंभीरता से सोचना चाहिए। अगर हम नहीं सोचेंगे तो क़ानून सोचने पर मज़बूर करेगा। जो क़ानून की बात ख़ुशी-ख़ुशी मंज़ूर नहीं करेगा, क़ानून उससे अपनी ज़बान में बात करेगा। अपनी बात समझाने की कोशिश करेगा।

... इसलिए अगर हम घर और समाज में लड़कियों के साथ होने वाली ग़ैरबराबरी दूर करना चाहते हैं, तो उनके हिसाब से क़ानून समझना होगा। अब तक क़ानून मर्दों के हिसाब से बनाए और समझाए जाते रहे हैं। यह रवायत बदल कर ही इस मुल्क की महिलाओं को बेहतर ख़ुशनुमा ज़िंदगी मिल सकती है।

बेहतर होगा कि हम मर्द, इस बदलाव के मुहिम में शामिल हों। बदली हुई हालत हमें जैसी ख़ुशी देगी, वैसी ख़ुशी हमें अब तक नहीं मिली होगी। यक़ीन जानिए। ख़ुशनुमा ज़िंदगी का यह नुस्ख़ा बहुत कारगर है। शर्तिया नुस्ख़ा है। थोड़ी मेहनत करनी पड़ेगी। हमें अपनी आदत और फ़ितरत बदलनी होंगी।

लड़कियों के साथ जीना सीखना पड़ेगा

ज़रा हम बताएँ, आज से 15-20 साल पहले लड़कियाँ सार्वजनिक जीवन में किन जगहों पर दिखती थीं? या लड़कियाँ काम करते हुए कहाँ-कहाँ दिखती थीं? अगर हमें पता नहीं तो अपने बड़ों से पूछ सकते हैं। चलिए ख़ाका खींचते हैं कि पहले लड़कियाँ ज़्यादा कहाँ-कहाँ होती होंगी-

- खेत मज़दूर।
- स्कूल की टीचर, कुछ कॉलेजों या यूनिवर्सिटी की टीचर।
- डॉक्टर, वह भी स्त्री रोग विशेषज्ञ।
- नर्स उसमें भी धर्म विशेष और राज्य विशेष की।
- रिसेप्शनिस्ट ताकि मुस्कुराता चेहरा स्वागत करे।
- एयर होस्टेस ताकि यात्रा का *सुखद* अनुभव हो।
- किसी कम्पनी के अफसर की सेक्रेटरी।
- फिल्मों की ऐसी हिरोइन जिसके पास गाना गाने के अलावा कोई काम न हो। काम हो तो वह ऑफिस सेक्रेटरी होगी, नर्स होगी, सीधी-साधी टीचर होगी या किसी बॉस या डॉन की सेवा टहल में लगी होगी, कैबरे डांसर या तवायफ़ होगी ...।
- गायिका ताकि सुरीली आवाज़ सुनने को मिल सके।
- पत्रकार पर चंद अंग्रेजी में और इक्का-दुक्का हिन्दी के बड़े अखबारों में। वह भी फीचर के पन्नों पर ज्यादा होंगी।

अगर समझने में दिक्कत हो तो ज़रा हम अपने आस-पास नज़र घुमाते हैं और याद करते हैं कि पंद्रह-बीस साल पहले कितनी लड़कियाँ पढ़ाई पूरी करने के बाद नौकरी कर रही थीं? इनमें कितनी ऊपर गिनाए गए कामों से इतर काम में लगी थीं? यानी कितनी इंजीनियर, कितनी हिन्दी पत्रकार, कितनी सर्जन, हड्डी की डॉक्टर, पायलट, किसी फिल्म की मुख्य कलाकार, संगीत निर्देशक, फिल्म निर्देशक, फोटोग्राफर, प्रोफेसर, प्रिंसिपल, दफ्तरों में बॉस, अफसर, आईपीएस अफसर, ट्रैफिक पुलिस इंस्पेक्टर, रेलवे में गार्ड, इंजन ड्राइवर, स्टेशन मास्टर, किसान वगैरह...वगैरह होती थीं या होती हैं। अपने घर-परिवार या आस-पड़ोस में देखते हैं। न हो तो फिर एक बार घर के किसी बुज़ुर्ग से पूछते हैं।

लड़कियों ने अपने लिए वे काम नहीं चुने थे। हम मर्दों की ज़रूरत थी। हम मर्दों ने तय किया, उन्हें क्या, क्यों और कैसे करना चाहिए। काम का ऐसा बँटवारा हम मर्दों का महिलाओं के प्रति नज़रिए का आईना भी है। यह इस बात का भी आईना है कि हम अपनी घर की लड़कियों को किस तरह के काम में देखना चाहते थे या हैं। और दूसरों के घर की लड़कियों से क्या काम करने की उम्मीद करते रहे हैं।

हमने तय किया कि हमारे घर की लड़की को टीचर बनना चाहिए, क्योंकि वह 'सम्मानित' काम है। तय समय का काम है। 'बड़े मर्द' से वास्ता वाला काम नहीं है। छोटे-छोटे 'मर्दों' से रिश्ता रखने वाला काम है। लोगों यानी मर्दों की नज़र में उसे बुरा नहीं समझा जाता हैं। टीचर 'जी' होती हैं। यह ज्ञान साझा करने का काम है। है न।

हमने तय किया कि हमारे घर की लड़कियों के लिए डॉक्टरी भी ठीक है। इसमें बाहर जाने का काम नहीं था। एक जगह अस्पताल या क्लिनिक में बैठ कर काम किया जा सकता है। हालाँकि, डॉक्टरी भी, सभी बीमारियों की नहीं। महिला डॉक्टर बनेगी तो स्त्री रोग की माहिर होगी। हड्डी की डॉक्टर नहीं। वह आम बीमारियों के लिए फीजीशियन नहीं बनेगी। क्यों? क्योंकि हड्डी तो मर्द का भी टूटेगा और इलाज करने लिए उसे मर्द को छूना ही पड़ेगा! सर्दी, ज़ुक़ाम, खाँसी, बुख़ार तो किसी को हो सकता है! ...तो एक लेडी डॉक्टर पराए मर्द के सीने पर आला लगाकर धड़कन सुने, यह अच्छी बात नहीं है! इसलिए सामान्य बीमारियों के लिए फीजिशियन भी महिलाएँ न के बराबर हैं।

नर्स, कलाकार, पत्रकार या एयर होस्टेस बनी लड़कियों के बारे में हमारा समाज क्या राय रखता था, यह किसी से छिपा नहीं है? अगर हमें पता नहीं है तो यह भी अपने किसी बड़े बुज़ुर्ग से ज़रूर जानने की कोशिश करनी चाहिए।

अगर इक्का-दुक्का लड़कियाँ सार्वजनिक जीवन के किसी गोशे में कामयाबी की सीढ़ी चढ़ गईं तो उनके बारे में क्या राय बनाई जाती थी या है, क्या यह हम आप नहीं जानते हैं?

अगर किसी लड़की ने गीत-संगीत-नृत्य-अभिनय का पेशा अपनाया तो हमारा समाज उन्हें किस निगाह से देखता रहा है, अगर हमें नहीं पता तो किसी बड़े-बुज़ुर्ग से ज़रूर पूछना चाहिए। समाज सीधे उनके चरित्र पर अँगुली उठा देता था। अब ऐसा नहीं होता है, ऐसी बात भी नहीं। इसका सबसे अच्छा उदाहरण तो राजनीति में सक्रिय महिलाओं का है। उनके बारे हम और हमारा समाज अच्छी राय नहीं रखते हैं। हर कामयाब महिला नेता के साथ, हम एक मज़ेदार क़िस्सा जरूर जोड़ देते हैं।

है न? हालाँकि, अब धीरे-धीरे हालात बदलते नज़र आ रहे हैं। पिछले कुछ सालों में लड़कियों ने उन क्षेत्रों में मज़बूत क़दम बढ़ाए हैं, जो अब तक हम मर्द नामधारियों के कब्ज़े में था।

हम विश्वविद्यालयों, इंजीनियरिंग या मेडिकल कॉलेजों, मैनेजमेंट या मीडिया या दूसरे संस्थानों में देखें। अब लड़कियाँ पहले से ज्यादा नज़र आ रही हैं। कई जगहों पर उनकी तादाद अच्छी है। ट्रेनों, बसों और सड़कों पर सफ़र करती अकेली लड़कियों की तादाद भी दिनोंदिन बढ़ रही है।

दफ़्तरों में भी जहाँ पहले न के बराबर लड़कियाँ नज़र आती थीं, अब वह दिख रही हैं। (हालाँकि यह भी सच है कि काम की जगहों पर ख़ास उम्र के बाद की लड़कियाँ कम दिखती हैं।)

अब शायद ही ऐसा कोई क्षेत्र बचा है, जहाँ लड़कियाँ न पहुँच रही हों। झण्डे न गाड़ रही हों।

इसलिए देखते-देखते चंद सालों में अब यह जुमला भी पहले से कम सुनाई देने लगा है कि फलाँ काम लड़कियों के लिए है, फलाँ नहीं।

दिल्ली में सुबह और शाम के वक़्त मेट्रो के लिए लाइन में लगी लड़कियों की तादाद बताती है कि पिछले कुछ सालों में सार्वजनिक जगहों पर उनकी मौजूदगी बढ़ी है।

सार्वजनिक जगहों पर थोड़ी सी लड़कियाँ क्या बढ़ीं, हम मर्दों के लिए तो जैसे सब कुछ उलट पुलट हो गया! लड़कियों की अचानक बढ़ी मौजूदगी से हम मर्द तालमेल नहीं बैठा पा रहे हैं। हम मर्दों के लिए अभी यह मान पाना मुश्किल हो रहा कि लड़कियाँ भी हमारी तरह ही बुद्धि रखती हैं। वे सारे काम करने की सलाहियत रखती हैं, जो हम सदियों से करते आ रहे हैं। घर और बाहर लड़कियों से की जाने वाली उम्मीद और उन्हें दिए जाने वाले काम से इस बात का अंदाज़ा लग सकता है।

लड़कियाँ जब सार्वजनिक जीवन में आ रही हैं तो अपने साथ नए संस्कार और नई संस्कृति भी ला रही हैं। वह पब्लिक वाली जगह में बराबर की हिस्सेदारी का दावा पेश कर रही हैं। वे सोचने पर मज़बूर कर रही हैं कि पब्लिक जगह का आचार-व्यवहार और शिष्टाचार अब सिर्फ़ मर्दिया सोच के मुताबिक नहीं चल पाएगा। इसे बदलना होगा। कहने को कहा जा सकता है कि अभी यह बड़े शहरों में ही हो रहा लेकिन अगर लेकिन यह हवा लखनऊ, पटना, भागलपुर जैसे शहरों में भी चलने लगी है। यही नहीं बड़े शहरों में जो लड़कियाँ दिख रही हैं, उनमें भी बड़ी तादाद इन छोटे शहरों की है।

लड़कियाँ सारा आसमान पाने के लिए बेताब हैं और हम लड़कों की मनःस्थिति अभी उसे मानने को राजी नहीं है। यह द्वंद्व कई जगह टकराव पैदा कर रहा। कई जगह हिंसा के रूप में सामने आ रहा। हम मर्द ज़्यादा हमलावर हो रहे हैं। हालाँकि, जहाँ अब तक सब कुछ चुपचाप सह लिया जाता था, अब सहा नहीं जा रहा। अब लड़कियाँ आवाज़ भी उठाने लगी हैं। वे अब इस बात के लिए राज़ी नहीं कि उन्हें महज़ शरीर के रूप में इस्तेमाल की जाने वाली चीज़ समझा जाए।

लड़कियाँ उन जगहों पर दिखाई देने लगी हैं, जहां कभी सिर्फ लड़के ही दिखाई देते थे। यह सार्वजनिक जगहों पर हक जमाने की लड़ाई है। अगर लड़कों ने सार्वजनिक जगहें उनके साथ साझा नहीं कीं तो टकराहट तय है।

ज़्यादातर हम लड़कों को लगता है लड़की का होना, मतलब उसके साथ सोना है। लड़कियों के बारे में हमारी भाषा, लड़कियों के साथ हमारा व्यवहार, लड़कियों के बारे में हमारी राय, लड़कियों के साथ हमारा सरोकार- इन सबमें हमारी सोच देखी जा सकती है। हममें से ज़्यादातर को यह भी लगता है कि शरीर ही एक लड़की है। उसका इस्तेमाल सिर्फ उसका शरीर है। उसकी कोई और सामाजिक उपयोगिता है ही नहीं। है न!

हालाँकि बराबरी का रास्ता काफी लम्बा है पर अब ऐसी सोच को चुनौती मिल रही है। हम माने या न माने, लड़कियाँ अपनी उपयोगिता अब ख़ुद तय करने में लगी हैं।

इसलिए बेहतर है कि हम लड़के रास्ता हमवार करें। साझीदार बनें। भागीदार बनें। हिस्सेदारी दें। वरना लड़कियों की जो रफ़्तार है, वह थमने वाली नहीं। बेहतर है एक ख़ुशनुमा समाज के लिए उनके साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने की आदत डाली जाए। यही आज की ज़रूरत है।

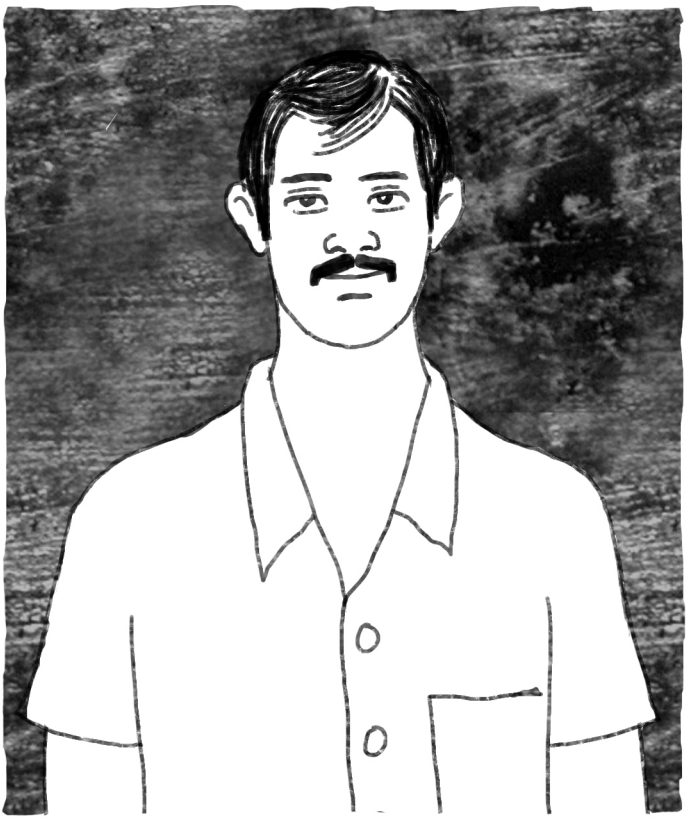

हिंसा को समझें, हिंसा से तौबा करें

हिंसा या तश्दुद कहते ही ज़ेहन में मारपीट की तसवीर उभरती है। ... और कमाल देखिए जब घरेलू हिंसा कहते हैं तो किसकी तसवीर उभरती है- एक चोट खाई, बदन पर लाल-नीले निशान वाली स्त्री। कभी सोचा है कि घरेलू हिंसा कहते ही, मर्दों की तसवीर क्यों नहीं उभरती? हमारे जैसे मर्द जाति के नैन-नक्श सामने क्यों नहीं आते हैं? ऐसा नहीं है कि हम मर्द हिंसा के शिकार नहीं होते हैं? लेकिन तसवीर स्त्रियों की इसलिए उभरती है, क्योंकि 99 फीसदी मामलों में घरेलू हिंसा की शिकार वही होती हैं। उन्हीं के साथ *पवित्र* माने जाने वाले घर के दायरे में हिंसा होती है।

अगर हम अपनी और परिवार की ज़िंदगी ख़ुशनुमा बनाना चाहते हैं, तो घरेलू हिंसा से तौबा करनी होगी। जब हम घरेलू हिंसा को नकारेंगे, तब स्त्रियों पर होने वाली बाहरी हिंसा के ख़िलाफ़ भी दमदार और असरदार मुहिम तैयार करने में मदद मिलेगी। ऐसा कैसे मुमकिन है कि निर्भया या दामिनी या किसी और लड़की के साथ सड़क पर होने वाली हिंसा पर तो हम गला फाड़ें, सड़कों पर आंदोलन करें और घर में माँ-बहन-बेटी-पत्नी या पार्टनर पर *मर्दानगी* के नाम पर रौब दिखाएँ।

जनाब, घर को वाकई मंदिर या जन्नत बनाना है तो हमें हर हिंसा से तौबा करनी होगी। एक लोकतांत्रिक घर और समाज बनाने में इसी से मदद मिलेगी। लोकतांत्रिक घर यानी जहाँ सभी घरवाले बेख़ौफ़ रहते हों। उन्हें अपनी बात कहने और अपने मन की करने की आज़ादी हो। जहाँ उनके नाम पर कोई और फ़ैसले न लेता हो।

लेकिन देखिए जनाब हिंसा का मतलब मार-कुटाई ही नहीं है। बदन पर पड़े लाल-पीले निशान ही हिंसा नहीं हैं। हिंसा का दायरा काफ़ी बड़ा है। हम आप इस हिंसा की वजह हैं या नहीं, पता नहीं।

मगर यह किसी भी शख़्स के इंसान होने का पैमाना हो सकता है।

जनाब, कई चीज़ें जो हमें मामूली लगती हैं, वह लड़कियों और महिलाओं को *हिंसा* का अहसास कराती हैं। अगर यह बात पल्ले नहीं पड़ रही हो या समझने में दिक्कत हो रही है तो नीचे लिखी जा रही बातों को हम अपने ऊपर लागू करें। अगर हमारे साथ वैसा व्यवहार हो, हमें वे सारी बातें बुरी न लगें और नाग़वार न लगे, हमारी ख़ुशी में इज़ाफ़ा हो, हमारा ख़ून बढ़ जाए और हम दोगुनी ताक़त से काम करने लगे...तो इसे हिंसा न माने। हम अपने घर की स्त्री जाति से ऐसा व्यवहार कर सकते हैं।

यानी अगर हिन्दुस्तानी मर्द, यानी हम और आप संवेदनशील नहीं बने तो मुश्किल तय है। आजादी के बाद हिन्दुस्तानी महिलाओं के लिए 26 अक्टूबर 2006 का दिन ऐतिहासिक था। लम्बी जद्दोजहद के बाद घर के दायरे के अंदर होने वाली हिंसा को न सिर्फ जुर्म माना गया बल्कि इससे बचाव को क़ानूनी अमलीजामा भी दिया गया।

यानी इसी दिन से 'घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण विधेयक 2005' क़ानून लागू हुआ। इसमें हिंसा की परिभाषा का दायरा भी काफी बढ़ा दिया गया है। यह क़ानून हर उस महिला की हिफ़ाज़त के लिए है जो घर के दायरे में रहती है। यह विधेयक इस मामले में भी अहम है कि यह देश के सभी मज़हब की महिलाओं पर एक समान रूप से लागू होता है।

हालाँकि इस विधेयक को संसद ने 13 सितम्बर 2005 को मंजूरी दे दी थी लेकिन इसे लागू कैसे किया जाए, इसके नियम नहीं बन पाये थे। महिला और बाल विकास मंत्रालय ने इस विधेयक को लागू करने के लिए व्यापक नियम बनाए और दिशा-निर्देश तैयार किए। मंत्रालय द्वारा तैयार नियम की अधिसूचना 17 अक्टूबर 2006 को जारी हुई और यह 26 अक्टूबर 2006 से लागू है। यह कानून इस मायने में भी अहम है कि इसमें घरेलू हिंसा की शिकार महिला को फौरी मदद पहुँचाने को प्राथमिकता दी गई है।

कानून ने घरेलू हिंसा को पाँच हिस्सों में बाँटा है-

- *शारीरिक हिंसा*
- *यौन हिंसा*
- *मौखिक और भावनात्मक हिंसा*
- *आर्थिक हिंसा*
- *दहेज सम्बंधी उत्पीड़न*

कानून की परिभाषा के मुताबिक कोई लड़की या महिला घरेलू हिंसा की शिकार है, अगर उसके साथ घर का मर्द कोई भी ऐसा व्यवहार करता है-

शारीरिक हिंसा- यानी शरीर पर होने वाली हिंसा

- जबरदस्ती यौन सम्बंध बनाना।
- मारपीट करना।
- थप्पड़ मारना।
- ठोकर मारना।
- दाँत काटना।

- लात मारना।
- मुक्का मारना।
- धक्का देना।
- धकेलना।
- किसी और तरीके से शारीरिक तकलीफ पहुँचाना।

यौन हिंसा

- जबरदस्ती यौन सम्बंध बनाना।
- अश्लील साहित्य या कोई अन्य अश्लील तस्वीर या किसी चीज़ को दिखाना या देखने के लिए मजबूर करना।
- किसी दूसरे का मन बहलाने के लिए मजबूर करना या इस्तेमाल करना।
- दुर्व्यवहार करने, बेइज़्ज़त करने या नीचा दिखाने के लिए यौन प्रकृति का कोई दूसरा कर्म जो महिलाओं की सम्मान को किसी न किसी रूप में चोट पहुँचाता हो।
- बालकों के साथ यौन दुर्व्यवहार।

मौखिक और भावनात्मक हिंसा

- बेइज़्ज़त करना।
- मजाक उड़ाना।
- गालियाँ देना।
- चरित्र और आचरण पर इल्ज़ाम लगाना।
- लड़का न होने के लिए बेइज़्ज़त करना, ताना देना।
- संतान न होने पर ताना देना।
- दहेज़ के सवाल पर अपमानित करना।
- महिला या उसके साथ रह रहे बच्चे-बच्चियों को स्कूल, कॉलेज या किसी अन्य शैक्षिक संस्थान में जाने से रोकना।
- नौकरी करने से रोकना।
- नौकरी छोड़ने के लिए मजबूर करना।
- महिला या उसके साथ रहने वाले किसी बच्चे/बच्ची को घर से जाने से रोकना।
- किसी से मिलने से रोकना।
- लड़की की ख़्वाहिश के खिलाफ़ शादी करने पर मजबूर करना।
- लड़की को पसंद के व्यक्ति से शादी करने से रोकना।
- अपनी बात मनवाने के लिए आत्महत्या करने की धमकी देना।
- इसी तरह का कोई और मौखिक या भावनात्मक दुर्व्यवहार।

आर्थिक हिंसा

- लड़की, महिला या महिला की संतानों को रोटी-कपड़ा-मकान, पढ़ाई-लिखाई के लिए पैसा नहीं देना।

- महिला या उसकी संतानों को खाना, कपड़ा और दवाइयाँ जैसी चीजें मुहैया न कराना।
- जिस घर में महिला रह रही है, उससे निकलने पर मजबूर करना।
- घर के किसी हिस्से में जाने या किसी हिस्से के इस्तेमान से रोकना।
- रोज़गार करने से रोकना या बाधा पहुँचाना।
- नौकरी करने की इजाज़त नहीं देना।
- किसी रोज़गार को अपनाने में बाधा पहुँचाना।
- महिला के वेतन या पारिश्रमिक को ज़बरदस्ती हड़प लेना।
- कपड़े या दूसरी रोज़मर्रा के घरेलू इस्तेमाल की चीज़ों के इस्तेमाल से रोकना।
- अगर किराये के मकान में रह रही तो किराये न देना।
- बिना महिला की सूचना और सहमति के बगैर स्त्रीधन या अन्य मूल्यवान वस्तुओं को बेच देना या बंधक रखना।
- स्त्रीधन को खर्च कर देना।
- महिला का वेतन, आय या मज़दूरी वग़ैरह जबरन ले लेना।
- महिला को अपना वेतन, आय या मज़दूरी वग़ैरह मर्ज़ी से इस्तेमाल न करने देना।
- बिजली आदि जैसे घर के दूसरे बिलों का भुगतान न करना।
- कोई और आर्थिक बल प्रयोग।

दहेज से जुड़ा उत्पीड़न

- दहेज के लिए किसी तरह की माँग या दहेज से जुड़े किसी अन्य उत्पीड़न में शामिल रहना।
- ये सब घरेलू हिंसा हैं। इसे घर के अंदर हम मर्द अंजाम देते हैं।

इस व्यापक हिंसा को जानना ज़रूरी है। तब ही यह समझना मुमकिन हो पाएगा कि वाकई में घरेलू हिंसा होती क्या है? यह समझना किसी महिला के लिए जितना ज़रूरी है, उतना ही इस देश में रहने वाले हम जैसे हर मर्द के लिए भी। तब ही हम हिंसा मुक्त घर और समाज बना सकते हैं। तब ही हम घर को मंदिर जैसा बनाने का गाना सकते हैं।

तो अब सवाल है, हम-आप क्या बनना चाहते हैं? पशु समान हिंसक या प्यारा मोहब्बत से लबरेज़ इंसान! तय तो हमें ही करना है।

वैसे हिंसा पर इतनी बात क्यों हो रही है?

क्या यह इतना अहम मुद्दा है?

इसके लिए हिंसा के असर को समझना ज़रूरी है?

यह समझना ज़रूरी है कि अगर कोई हमें हर रोज़ या हर दूसरे दिन या मौक़े-बेमौक़े अगर यह कहे कि तुम्हें तो कुछ समझ में नहीं आएगा या तुम किसी काम के नहीं हो या तुम कुछ भी ढंग से नहीं कर सकते तो हम पर क्या असर पड़ेगा, जनाब?

तो आइए हम हिंसा की असर पर बात कर लें। यह असर अच्छा है या बुरा- हम ही तय करें।

मन पर वार करती है हिंसा

घर में होने वाली हिंसा, महिलाओं-बच्चे और बच्चियों पर ज़बरदस्त असर डालती है। उनकी शख़्सीयत को तोड़ती है। वे कैसे इंसान बनेंगे, इस बात की बुनियाद भी इससे तय होती है। हिंसा के असर को समझने वाले कई रिसर्च भी इस बात की तस्दीक करते हैं। क्या हम इसे समझते हैं ?

महिलाओं-बच्चे-बच्चियों पर असर

- हिंसा से इनमें डर पैदा होता है। डर इन्हें कई बार आक्रामक बनाता है।
- बच्चे-बच्चियों को स्कूल और पढ़ाई में परेशानी होती है। सीखने की सलाहियत कम हो जाती है। लड़के-लड़कियां किसी चीज़ में ध्यान नहीं लगा पाते।
- बच्चे-बच्चियों में यह विचार पैदा होता है कि हिंसा सामान्य बात है। जब जरूरत पड़े तो हम भी हिंसा का इस्तेमाल कर सकते हैं।

बेइज्जती और शर्म का अहसास

- एक तमाचा शरीर को कम 'मन और अहम' को ज्यादा चोट पहुँचाता है। यह चोट हिंसा को बढ़ावा देती है। यानी घाव से ज्यादा शर्म हिंसा को बढ़ावा देती है।
- अगर कोई महिला या बच्चा लगातार हिंसा के शिकार हो रहे हैं या हिंसा के माहौल में जी रहे हैं तो उनमें डर वाले हार्मोन बढ़ जाते हैं। ये हार्मोन हैं- कार्टिसोल और एंड्रेलिन। इनकी जाँच खून से हो सकती है। वैसे तो यह जरूरी हार्मोन हैं जो हमें खतरे से अलर्ट

करते हैं। यह इमर्जेंसी की हालत में इस्तेमाल होने वाला हार्मोन है। अब अगर कोई लगातार अलर्ट या इमर्जेंसी की हालत में रहे तो उसकी दिमागी दशा क्या होगी? वह तो मानसिक रूप से बीमार और डरपोक हो जाएगी।

लड़कियों पर असर

- यूरोप और अमेरिका में हुए शोध बताते हैं कि हिंसा के माहौल में परवरिश पाने वाली लड़कियाँ हिंसा को सामान्य मानकर अपना लेती हैं।
- उनका खुद पर भरोसा खत्म हो जाता है। शख़्सीयत में टूटन और बिखराव पैदा होता है।
- हिंसा से बचने के लिए मदद लेने से परहेज करती हैं।
- डिप्रेशन, तनाव और नाउम्मीदी की शिकार हो जाती हैं।

लड़कों पर असर

- जहाँ ज्यादातर लड़कियाँ हिंसा को अंदरूनी तौर पर आत्मसात करती हैं वहीं लड़कों में इसका असर बाहरी तौर पर ज्यादा दिखाई देता है।
- लड़के दूसरों के साथ आक्रामक व्यवहार करते हैं। बात-बात पर हिंसा का सहारा लेते हैं।
- ऐसे लड़के बड़े होने पर अपने निजी रिश्ते में भी हिंसा का जमकर इस्तेमाल करते हैं।

और जो हिंसा करते हैं, क्या उन पर भी कोई असर होता है? हाँ, जो हिंसक मर्द होते हैं उनमें

- अपराधबोध की भावना घर कर जाती है।
- कई बार शर्मिंदगी का अहसास होता है।
- सब कुछ खो जाने का अहसास। हिंसा की वजह से रिश्ते में दरार और नुकसान की भावना पैदा होती है।
- नाकामी का अहसास होता है।
- कुछ ऐसे भी मर्द हैं जिन्हें हिंसा के बाद संतुष्टि मिलती है।
- छोटी-छोटी बातों की अभिव्यक्ति हिंसक रूप में करते हैं।
- काम में नुकसान और चिड़िचिड़ापन बढ़ जाता है।

तो कुछ सवाल हैं जनाब। हमें सिर्फ़ हाँ या न में जवाब देना है।

- क्या हम चाहते हैं कि हम मर्दों के घर में घुसते ही मुर्दनी छा जाए?
- क्या हम चाहते हैं कि हमारे घर में आते ही हमारी बहन, पत्नी, बेटी-बेटे छिप जाएँ? ख़ामोश हो जाए
- क्या हम चाहते हैं कि हमारी बहन-पत्नी-बेटी हमारी आवाज़ सुनते ही काँपने लगे?
- क्या हम चाहते हैं कि वे हमेशा इस ख़ौफ़ के साए में जिये कि न जाने कब हमारी ज़बान चल जाए और हमारा हाथ उठ जाए?
- क्या हम चाहते हैं कि हमारा बेटा डराने वाला एक हिंसक मर्द के रूप में बड़ा हो?
- क्या हम चाहते हैं कि हमारी बेटी डरी-सहमी बड़ी हो?
- क्या यह हम चाहते हैं कि हमारी बेटी मर्द नाम से ही डरने लगे?
- क्या हम चाहते हैं कि हमारे घर की लड़कियों/महिलाओं की शख़्सीयत टूटी-बिखरी हो?

- घर के बाहर जिससे लोग डरते हैं, उसे आप क्या कहते हैं?
- तो घर के अंदर जिससे लोग डरें, उसे क्या नाम देंगे?
- क्या आपको किसी डाँट कर मार कर ख़ुशी मिलती है, अगर हाँ तो आप अपने को क्या नाम देंगे?

इन सवालों का जवाब किसी और को नहीं हमें ख़ुद को देना है, जनाब।

हमारा जवाब तय करेगा कि हम अपने घर और घर में रहने वालों को कैसा बनाना चाहते हैं।

हालाँकि, इतना तो कहने की इजाज़त दीजिएगा न, हिंसा के असर ख़तरनाक हैं। यह साफ़ है! इसलिए बेहतर आज और बेहतर कल के लिए, बेहतर ज़िंदगी और इंसान के लिए, बेहतर समाज और घर के लिए, बराबरी वाला हिंसा से आज़ाद माहौल बनाया जाना जरूरी है।

(इंटरनेशन सेंटर फॉर रिसर्च ऑन वीमेन के गैरी बार्कर से ढाका में जेण्डर आधारित हिंसा के असर के बारे में हुई बातचीत का निचोड़)

जानें, काम की जगह पर कैसे रहें

काम करने की जगह पर महिलाएँ अब पहले से ज़्यादा दिख रही हैं। मगर अब भी महिलाओं को ऐसी जगहों पर बेहतर माहौल देने का काम पूरा नहीं हुआ है। न ही उनकी मुसीबतें कम हुई हैं। जिस तरह घर में बेहतर माहौल देने की मुहिम चली, वैसे ही काम करने की जगह को भी हिंसा और उत्पीड़न मुक्त बनाने की मुहिम चली।

लड़कियों/महिलाओं को काम करने की जगह पर बेहतर माहौल देने की पहली बार क़ानूनी कोशिश 1997 में हुई। अगस्त 1997 में सुप्रीम कोर्ट ने कार्यस्थल यानी काम की जगह पर यौन उत्पीड़न रोकने के लिए कुछ दिशा-निर्देश दिए। उसके बाद 2013 में संसद ने एक विधेयक पास किया। 9 दिसम्बर 2013 से यह क़ानून की शक़्ल में लागू है। इस क़ानून का नाम है, 'महिलाओं का कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न (निवारण, प्रतिषोध व प्रतितोष) अधिनियम 2013' [सेक्सुअल हरासमेंट ऑफ वूमेन एट वर्कप्लेस (प्रिवेंशन, प्रोहिबेशन और रीड्रेसल) एक्ट 2013]।

काम करने की जगह में वह सारे स्थान शामिल हैं, जहाँ महिलाएँ या लड़कियाँ मौजूद हैं। ये स्थान कोई सरकारी या ग़ैर सरकारी जगह हो सकती है। कोई घर हो सकता है। खेल का मैदान हो सकता है। कोई दुकान हो सकती है। अस्पताल या नर्सिंग होम हो सकता है। कोई खेत या ईंट-भट्ठा हो सकता है। दफ़्तर के काम से कोई बाहर की जगह हो सकती है। वह गाड़ी हो सकती है, जिसमें

लड़की दफ़्तर के काम से आ-जा रही है। कोई मीडिया संस्थान, ट्रस्ट या स्वयंसेवी संस्था का दफ़्तर हो सकता है। कोई हॉस्टल, गेस्ट हाउस या होटल हो सकता है।

यानी हर वह जगह या चीज़ जहाँ लड़कियाँ किसी काम या गतिविधि के लिए आती-जाती या रहती हैं। जहाँ उनका किसी न किसी काम के सिलसिले में, किसी न किसी मर्द से, किसी न किसी रूप में पाला पड़ता है। यानी इस दायरे में सरकारी-ग़ैर सरकारी दफ़्तरों में काम करने वाली कोई नौकरीपेशा, असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली, स्कूल-कॉलेज-यूनिवर्सिटी में पढ़ने-पढ़ानेवाली, अस्पताल या नर्सिंग होम में काम करने वाली डॉक्टर-नर्स, खेतों में काम करने वालीं, घरों में काम करने वालीं, खिलाड़ी, पत्रकार, मज़दूर, स्वयंसेवी संस्थाओं में काम करने वाली कार्यकर्ता, कोई भी और काम करने वाली कर्मचारी वग़ैरह... वग़ैरह शामिल हैं। यानी आप महिलाओं का कोई भी रूप याद कीजिए या महिलाएँ किसी भी और पहचान से जहाँ भी हाज़िर हैं, वह काम करने की जगह के दायरे में आएगा। इन सब जगहों पर ये क़ानून लड़कियों और महिलाओं की हिफ़ाज़त के लिए लागू होगा।

कार्यस्थल या काम करने की जगह पर यौन उत्पीड़न के दायरे में वे सारी चीज़ें आएँगी, जो महिला की इज़्ज़त और ख़्वाहिश के ख़िलाफ़ हो।

यौन उत्पीड़न के दायरे में हम मर्दों या लड़कों की ये हरकतें आएँगी-

- किसी महिला के शरीर को छूना।
- शरीर को छूने की कोशिश करना।
- छूते हुए आगे बढ़ जाना।
- कोई भी ऐसी बात कहना या माँग करना या प्रस्ताव देना जिसका रिश्ता यौन प्रकृति का हो।
- यौन मतलब वाली या गंदी टिप्पणी करना।
- अश्लील चीज़ें जैसे-फोटो, वीडियो, कार्टून, पर्चे वगैरह दिखाना।
- अश्लील संदेश, ईमेल, एमएमएस भेजना।
- सोशल साइट पर किसी लड़की के बारे में यौनिक कमेंट करना।
- जिस्मानी तौर पर या बोलकर या इशारे से ऐसी हरकत करना जो यौन प्रकृति का हो।
- छेड़छाड़ करना।
- धोखे से पकड़ने या गले लगाने की कोशिश करना।
- फब्तियाँ कसना या ऐसे गाने गाना जो अश्लील हों।
- लड़की के एतराज़ के बाद भी उसके नज़दीक खड़े हो जाना।
- महिला के मना करने के बावजूद ऐसे खड़े होना जिससे किसी महिला का शरीर छू जाए या छूने का अहसास हो।
- महिला होने के नाते भेदभाव करना।
- महिलाओं को नीचा दिखाने वाले ताने देना।
- महिलाओं के सामने भद्दे मज़ाक या चुटकले कहना।
- प्रमोशन या किसी और फ़ायदे के लिए यौन सम्बंध की माँग करना।

- यौन हरकत का विरोध करने पर धमकाना, प्रमोशन रोक देना या धमकी देना, परेशान करना।
- किसी महिला को अभी या आगे की किसी नौकरी में नुकसान पहुँचाने की धमकी देना।
- उसके काम में जबरन दख़ल देना, धमकाना।
- उसके लिए बेइज़्ज़ती और दुश्मनी से भरा माहौल बनाना।
- ऐसी बेइज़्ज़ती वाला सुलूक जो उसकी सेहत और हिफ़ाज़त के लिए ख़तरा पैदा कर दे।
- किसी महिला की निजता भंग करना, ताक-झाँक करना।
- किसी महिला को ज़बरदस्ती कहीं रोकना।

क़ानून से डरे नहीं, महिलाओं को सम्मान दें

हम मर्दों को कई और क़ानून के बारे में भी जानना निहायत ज़रूरी है। कई बार जिन्हें हम आम सामान्य व्यवहार या मामूली बात मान लेते हैं, वे असलीयत में अपराध के दायरे में आते हैं। ऐसे व्यवहारों के जुर्म के दायरे में आने की अनेक वजहें हैं। सबसे बड़ी वजह है कि जिन्हें हम मामूली या सामान्य मानते हैं, वे लड़कियों या महिलाओं के लिए असमान्य हैं। हमारे कई व्यवहार उन्हें मानसिक और शारीरिक तकलीफ़ देते हैं। कई बार ऐसी छोटी या मामूली माने जाने वाल बातें लड़कियों की ज़िंदगी बदल देती है। कई बार कई लड़कियाँ हमारे इन्हीं मामूली से व्यवहार की वजह से अपनी जान भी दे देती हैं। तब हमें अपनी मामूली हरकत के गंभीर असर का पता चलता है। हम इन जुर्म वाले व्यवहारों के बारे में आगे बात करेंगे। बस एक गुज़ारिश है कि बात करते हुए हम ये ज़रूर सोचते चलें कि हमारे साथ ऐसा हो तो कैसा रहेगा? हमें कैसा लगेगा? जैसे-कोई लगातार हम मर्दों का पीछा करे... तो हमें कैसा लगेगा।

तो आइए हम पीछा करने जैसी मामूली बात से ही शुरू करते हैं।

अगर हम में से कोई मर्द किसी स्त्री के नापसंद करने के बाद भी लगातार उससे मिलता है या मिलने और बात करने की कोशिश करता है तो यह जुर्म है। यही नहीं, अगर हम में से कोई शख़्स किसी महिला के इंटरनेट इस्तेमाल करने, उसके ईमेल या किसी और तरह के इलेक्ट्रॉनिक माध्यम

पर निगरानी रखता है तो यह भी जुर्म है। पहली बार दोष साबित होने पर तीन साल तक की जेल और जुर्माना होगा। दूसरी बार दोषी पाए जाने पर इसकी सजा पाँच साल तक की जेल और जुर्माना भी होगा। **(आईपीसी की धारा 354 डी)**

अगर हम में से कोई मर्द किसी महिला के कपड़े उतारने के लिए हमले या ज़ोर-ज़बरदस्ती करता है तो यह अपराध है। इसकी सज़ा कम से कम तीन साल जेल होगी और यह सात साल तक बढ़ सकती है। ऊपर से जुर्माना भी देना होगा। **(आईपीसी की धारा 354 बी)**

यौन उत्पीड़न क्या है? क्या हमें पता है? इसे जान लेने में हमारी भलाई है। इसी के मुताबिक अपने व्यवहार में बदलाव करने में ही हमारी ख़ुशहाली है।

क़ानून के मुताबिक हम मर्दों की नीचे गिनाई गई ये सभी हरकत यौन उत्पीड़न के दायरे में आएँगी और जुर्म मानी जाएँगी-

- अगर कोई मर्द, किसी महिला की ख़्वाहिश के ख़िलाफ़ महिला के बदन को छूता है या ऐसी कोई भी हरकत करता है जिससे साफ़ तौर पर यौन इशारा निकलता हो।
- किसी मर्द द्वारा यौन सम्बंधों की माँग या उसकी गुज़ारिश करना।
- किसी महिला की ख़्वाहिश के ख़िलाफ़ उसे अश्लील साहित्य दिखाना।
- गंदी अश्लील टिप्पणियाँ करना, बातें करना।
- ऊपर गिनाए गए बिंदुओं में से पहले तीन में गिनाए गए अपराध करने पर तीन साल तक सश्रम कारावास या जुर्माना या दोनों सजाएँ हो सकती हैं। चौथे बिंदू के अपराधों के लिए एक साल तक की सजा या जुर्माना या दोनों हो सकता है। **(आईपीसी की धारा 354 ए)**

अगर कोई किसी लड़की पर उसे शर्मिंदा या बेइज़्ज़त करने की नीयत से हमला करता है या उसके साथ ज़ोर ज़बरदस्ती करता है तो यह जुर्म होगा। इसकी सज़ा कम से कम एक साल जेल होगी। जेल की यह सज़ा पाँच साल तक बढ़ सकती है। साथ ही जुर्माना भी लगेगा। **(आईपीसी की धारा 354 ए)**

कोई लड़की है। हम जैसा कोई मर्द या लड़का उसे लगातार तंग कर रहा। उस पर कुछ करने या मानने के लिए दबाव बना रहा। वह नहीं मान रही। वह मना कर रही है। वह उसकी शिकायत करती है। मर्द को लगता है, वह मना कैसे कर सकती है। वह उस पर हथियार से हमला करता है। उसे स्थाई या अस्थाई चोट पहुँचाती है। उस पर तेज़ाब फेंकता है। उस लड़की के चेहरे या शरीर को चोट पहुँचती है। उसके जिस्म के कई हिस्से हमेशा के लिए बिगड़ जाते हैं या ख़राब हो जाते हैं। ऐसी हरकत को गंभीर जुर्म माना गया है। इसकी सज़ा कम से कम दस साल है और यह सज़ा उम्र क़ैद में भी बदल सकती है। मुजरिम को जुर्माना भी देना होगा। यह जुर्माना इतना होना चाहिए

जिससे पीड़ित का इलाज बेहतर तरीके से हो सके। **(आईपीसी की धारा 326 ए)**

अगर कोई महिला अपने कमरे या ग़ुस्लख़ाने में या कहीं ऐसी जगह है, जहाँ उसे लगता है कि यह पल सिर्फ़ और सिर्फ़ उसका है। उसे कोई देख रहा है न देख सकता है। ऐसी हालत में अगर हमारे जैसा कोई मर्द अपने मन से या किसी के कहने पर उसके इन निजी पलों में ताक झाँक करता है, उसकी फोटो खींचता है या ऐसी तस्वीरें खींचकर लोगों को बाँटता है, तो यह सब जुर्म है। पहली बार दोष साबित होने पर इसकी सज़ा कम से कम एक साल जेल होगी। जेल की यह सजा तीन साल तक बढ़ सकती है। साथ ही जुर्माना भी लगेगा। अगर कोई दूसरी बार ऐसा ही जुर्म करता है और दोष साबित होता है तो कम से कम तीन साल की जेल होगी। जेल की यह सजा सात साल तक बढ़ सकती है। जुर्माना भी देना होगा। **(आईपीसी की धारा 354 सी)**

इसी तरह अगर कोई किसी को नुक़सान पहुँचाने, जख़्मी करने की नीयत से जानबूझ कर किसी पर तेज़ाब फेंकता है या तेज़ाब फेंकने की कोशिश करता है तो यह भी जुर्म होगा। इसकी सज़ा कम

से कम पाँच साल जेल होगी। जेल की सजा सात साल तक बढ़ सकती है। इसके साथ ही जुर्माना भी लगेगा। **(आईपीसी की धारा 326 बी)**

बलात्कार। क्या बलात्कार के बारे में बताए जाने की ज़रूरत है? यह स्त्री की इच्छा और सहमति के बग़ैर जबरन किया गया कर्म है। ऐसे कर्म से पता चलता है कि हम स्त्री जाति को किस नज़रिए से देखते हैं। उन पर हमलावर होकर हम अपनी *मर्दानगी* साबित करते हैं। क़ानून ऐसी *मर्दानगी* को ख़तरनाक मानता है। तो क्या हम ऐसी *मर्दानगी* के साथ जीएँगे जो क़ानून की नज़र में जुर्म है।

तो आइए देखते हैं कि क़ानून की नजर में बलात्कार क्या है? क़ानून कहता है कि एक मर्द बलात्कार करता है अगर

- वह किसी स्त्री की योनि, मुँह, पेशाब के रास्ते या गुदा में किसी भी सीमा तक अपना लिंग घुसाता है या उसे अपने साथ या किसी और मर्द के साथ ऐसा करने पर मजबूर करता है।
- वह किसी स्त्री की योनि, पेशाब के रास्ते या गुदा में अपने लिंग की बजाय कोई और चीज़ या अपने जिस्म का कोई और हिस्सा किसी भी सीमा तक घुसाता है या ऐसा अपने साथ या किसी और मर्द के साथ करने पर मजबूर करता है।
- वह किसी स्त्री को उसी स्त्री के शरीर के किसी भाग को उसके योनि, गुदा या पेशाब के रास्ते में या शरीर के किसी और हिस्से में प्रवेश कराता है या किसी और से कराता है स्त्री से ऐसा अपने साथ या किसी अन्य शख़्स के साथ कराता है।
- वह किसी स्त्री की योनि, पेशाब के रास्ते या गुदा पर अपना मुँह लगाता है या ऐसा अपने साथ या किसी अन्य शख़्स के साथ करने पर मज़बूर करता है।

ये सभी **आईपीसी की धारा 375** के तहत जुर्म हैं। **आईपीसी की धारा 376** के तहत इनकी सजा कम से कम सात साल कठोर कारावास होगी। यह सज़ा उम्र क़ैद तक बढ़ सकती है। साथ ही जुर्माना भी लगेगा।

इसके अलावा कुछ ख़ास हालात में बलात्कार की सज़ा की मियाद अलग हो सकती है। जैसे अगर बलात्कार करने वाला पुलिस वाला या कोई सरकारी कर्मचारी हुआ। बलात्कार पुलिस कस्टडी में हुआ या दंगों के दौरान ऐसी घटना घटी...। ऐसे हालात में सज़ा की मियाद कम से कम दस साल का कठोर कारावास होगी जो बढ़कर उम्र क़ैद में तब्दील हो सकती है। जुर्माना भी देना होगा।

दिल्ली में एक लड़की के साथ कुछ लोग चलती बस में दुराचार करते हैं। उसके साथ मारपीट करते हैं और उसकी मोत हो जाती है। मुम्बई के एक अस्पताल में नर्स के साथ उसी अस्पताल

का एक कर्मचारी बलात्कार करता है। मारपीट करता है। उसे गंभीर चोट आती है। वह ज़िंदा तो रहती है लेकिन उसका सारा बदन बेजान पड़ जाता है। वह आँखें तो खोलती है लेकिन किसी को पहचान नहीं पाती। क़ानून बलात्कार के ऐसे मामलों को अलग नज़रिए से देखता है। ऐसी हालत में मुजरिम को **आईपीसी की धारा 376 ए** के तहत कठोर कारावास की सजा होगी। यह सजा कम से कम बीस साल की होगी। यह बढ़ कर उम्र क़ैद और मौत की सज़ा तक जा सकती है।

अगर निर्भया जैसा कोई मामला होता है,जहाँ बलात्कार में एक से ज़्यादा मर्द शामिल हैं तो यह सामूहिक बलात्कार कहलाएगा। इसकी सज़ा भी कठोर कारावास है। **आईपीसी की धारा 376 डी** के मुताबिक, इसकी मियाद कम से कम 20 साल होगी। यह मियाद उम्र क़ैद तक बढ़ सकती है। इस मामले में उम्र क़ैद का मतलब उसकी पूरी ज़िंदगी का कारावास है।

अगर बलात्कार के मामलों में किसी को पहले सज़ा हुई। सज़ा पूरी होने के बाद वह फिर कोई ऐसा अपराध करता है तो **आईपीसी की धारा 376 ई के** मुताबिक, उसे ज़िंदगी भर के लिए उम्र क़ैद होगी या सज़ा-ए-मौत मिलेगी।

जनाब, अगर कोई मर्द किसी महिला को शर्मिंदा करने या उसके सम्मान से खिलवाड़ करने की नीयत से कोई जुमला उछालता है, कोई आवाज़ निकालता है, इशारे करता है, कोई चीज़ दिखाता है और महिला की निजता में दख़ल देने की कोशिश करता है तो यह भी जुर्म है। हम कहेंगे, यह तो मामूली बातें हैं। हम मर्दों में से कई तो ये काम बखूबी करते हैं। करते होंगे। है न? पर **आईपीसी की धारा 509** कहती है कि ऐसा करने वाले मुजरिम को तीन साल तक की जेल की सजा और साथ ही जुर्माना होगा।

जनाब अगर हम शादी-शुदा हैं तो हमें अपने व्यवहार यानी आदत और फितरत के बारे में बार-बार सोचना चाहिए। जहाँ ज़रूरत हो सुधार करना चाहिए। वरना हम आप हिंसा के मुजरिम होंगे।

जनाब, क्या पता है- हम अपनी पार्टनर की मर्ज़ी के बिना उससे शारीरिक सम्बंध नहीं बना सकते। उसकी रज़ामंदी ही नहीं बल्कि उसकी ख़्वाहिश भी अहम और ज़रूरी है। अगर हमने ज़ोर-ज़बरदस्ती की तो यह घरेलू हिंसा के दायरे में आ जाएगी। अब तक अगर हम ऐसा करते आ रहे हों, तो बेहतर है कि ये आदत आज के आज बदल डालें।

शादीशुदा महिला को किसी आपराधिक मक़सद से फुसलाकर ले जाना या नजरबंद करना अपराध है। **आईपीसी की धारा 498** के मुताबिक इसके लिए दो साल तक की सजा या जुर्माना या दोनों हो सकते हैं।

इसी के साथ **आईपीसी की धारा 498 ए** कहती है कि अगर किसी स्त्री का पति या उसके रिश्तेदार, उसके साथ बुरा बर्ताव करते हैं, मारते-पीटते हैं या तंग करते है तो यह भी जुर्म होगा।

इसकी सज़ा तीन साल जेल होगी ओर जुर्माना भी लगेगा।

मान लें, हमारे घर में किसी महिला की मौत जलने से या जिस्म पर कोई चोट लगने से हो जाती है। अभी उस महिला की शादी के सात साल नहीं हुए हैं। यह साबित हो जाता है कि हम ससुरालियों ने महिला से दहेज़ की माँग की थी। यह दहेज़ के लिए मौत मानी जाएगी। **आईपीसी की धारा 304 बी** के मुताबिक इसके लिए कम से कम सात साल की जेल की क़ैद है जो बढ़कर उम्र क़ैद भी बदल सकती है।

बच्चों को यौन हिंसा से बचाने के लिए अलग से कानून बनाने की ज़रूरत महसूस हुई। इसके लिए 2012 में एक ख़ास कानून बना। इसे प्रोटेक्शन ऑफ चिल्ड्रेन फ्रॉम सेक्सुअल ऑफेंसेज एक्ट-2012 नाम दिया गया।

यह क़ानून 18 साल से कम उम्र के सभी बच्चे-बच्चियों को यौन हिंसा से सुरक्षा देता है। इस क़ानून के तहत नीचे बताई गईं ये सभी हरकत यौन अपराध हैं और इनके लिए सजा हैं-

- बच्चे-बच्चियों को गंदी तस्वीरें दिखाना या उनकी गंदी तस्वीर खींचना।
- अगर कोई शख़्स अपने मज़े के लिए किसी लड़के या लड़की की योनि, लिंग, गुदा या छाती को छूता है
- अगर कोई शख़्स किसी लड़के या लड़की की योनि, गुदा, मुँह, पेशाब करने वाली जगह में अपना लिंग किसी भी सीमा तक डाले या कोशिश करे
- अगर कोई शख़्स किसी लड़के या लड़की की योनि, गुदा, पेशाब करने वाले रास्ते में शरीर का कोई हिस्सा जैसे-ऊँगली या कोई और सामान या वस्तु को ख़ुद डाले, किसी दूसरे शख़्स द्वारा यह काम करवाए या ख़ुद पर या अन्य व्यक्ति पर ऐसा करवाए।
- किसी अश्लील साहित्य के लिए लड़के या लड़की का इस्तेमाल करना।
- ऐसे अश्लील साहित्य रखना या बेचना जिसमें किसी भी तरह से लड़के या लड़की का इस्तेमाल किया गया हो।

- ये भी जुर्म है कि अगर किसी शख़्स को किसी लड़के या लड़की के साथ हुई किसी यौन हिंसा की जानकारी है और उसने इसकी रिपोर्ट दर्ज़ न कराई हो।
- यही नहीं अगर किसी लड़के या लड़की के साथ कोई पुलिसवाला, सशस्त्र बल वाला, सरकारी कर्मचारी यौन हिंसा करता है या यौन हिंसा पुलिस थाने, रिमांड होम, संरक्षण गृह, सरकारी या निजी अस्पतालों, स्कूल या किसी धार्मिक जगह पर होती है ...तो इस क़ानून के मुताबिक यह गंभीर जुर्म है। इसके लिए कड़ी सज़ाएँ है।

हम मर्द क़ानून से डरते क्यों है?

क़ानून हम मर्दों को डराने के लिए नहीं हैं। बल्कि अपराध पर क़ाबू पाने के लिए हैं। हम में जो

संवेदनशील हैं, लड़कियों और महिलाओं को इंसान मानते हैं और उनका सम्मान करते हैं, उन्हें डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। डर उन मर्दों को होना चाहिए जो हिंसा, दूसरों को तकलीफ देने, तंग करने, सम्मान को ठेस पहुँचाने को ***मर्दानगी*** मानते हैं। ये सभी क़ानून महिलाओं और बच्चे-बच्चियों के ख़िलाफ़ होने वाले जुर्म रोकने के लिए हैं। इन्हें रोकने में हम मर्दों की भागीदारी काफ़ी अहम है। अगर हमने अपनी आदत और फ़ितरत में बदलाव करते हुए स्त्रियों को अपने बराबर हक़ दिया तो ऐसे क़ानून को अमल में लाने की ज़रूरत भी नहीं पड़ेगी। यक़ीन जानिए। अब सबसे अहम सवाल है कि ख़ुशहाल ज़िंदगी के लिए क्या हम मर्द अपनी आदत और फ़ितरत बदलने को तैयार हैं।

(**नोटः** अलग-अलग क़ानूनों से जुड़े हिस्से *हिन्दुस्तान* अखबार में छपी मेरी रिपोर्टों, एसोसिएशन फॉर एडवोकेसी एंड लिगल इनिशिएटिव (आली) के रिसोर्स *लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम 2012: कुछ प्रमुख बातें* और *सेक्शंस ऑफ सेक्सुअल ऑफेंसेज एगेंस्ट वीमेन* के आधार पर तैयार किए गए हैं। आली की रेणु मिश्रा ने इसे बेहतर करने में मदद की है।)

ख़ुशियों के लिए साझेदारी और भागीदारी ज़रूरी

प्रकृति सिर्फ जैविक रूप से स्त्री और पुरुष के बीच कुछ फर्क करती है। प्रकृति यह नहीं तय करती कि किसका दर्ज़ा ऊँचा है और किसका कम। प्रकृति के लिए स्त्री और पुरुष दोनों रूप बराबर हैं। हाँ, कुछ ख़ास काम के लिए कुछ ख़ास अंग अलग हैं। बतौर इंसान इनमें इससे ज़्यादा फ़र्क़ नहीं है। प्रकृति न तो यह कहती है कि पुरुष बुद्धि के मामले में स्त्रियों से तेज़ हैं और न ही यह बताती है कि मर्द ज़्यादा ताक़तवर होता है।

प्रकृति के जैविक फ़र्क़ को इंसान और ख़ासतौर पर मर्दिया समाज ने गैरबराबरी बनाने के लिए इस्तेमाल किया है। उसने प्राकृतिक और शारीरिक फ़र्क़ को महिलाओं को कमतर बनाने और साबित करने के लिए इस्तेमाल किया। यानी इनके बीच सामाजिक रूप से दिखने वाली गैर बराबरी, पैदाइश के बाद शुरू होती है। यानी लड़का और लड़की पैदा होने पर हमारी प्रतिक्रिया, यह गैरबराबरी शुरू करती है।

यह गैर बराबरी हम शुरू करते हैं। जैसे- लड़का है तो कैसे रहेगा और लड़की है तो कैसे रहेगी। जैसे-जैसे उनकी उम्र बढ़ती है, हमारी प्रतिक्रिया और उन्हें देखने का हमारा नज़रिया बदलता जाता है। यह नज़रिया बराबरी वाला तो क़तई नहीं होता। यही ग़ैरबराबरी एक को ऊँचे पायदान पर बैठाती है और एक को नीचे। यह गैरबराबरी एक के हाथ में सत्ता और ताक़त देती है।

यह सत्ता ज्ञान, सम्पत्ति, परिवार पर नियंत्रण, फैसला लेने के हक़ में देखा जा सकता है। जैसे- लड़कों के खाने, पढ़ाने पर ज़्यादा ध्यान दिया जाता है। कई काम उसी से कराए जाते हैं। बाहर कौन जाएगा और घर के अंदर कौन रहेगा, यह तय किया जाता है। ... हमेशा लड़कों को तरजीह दी जाती है और तरजीह देने का यह सिलसिला आगे चल कर, घर के बारे में फ़ैसले कौन लेगा... यहाँ तक पहुँचता है।

प्रकृति के फ़ैसले से इतर, पैदा होने के बाद लड़का-लड़की के बीच समाज में जो ग़ैरबराबरी होती है और जो विभेद शुरू होता है, उसे *जेण्डर* का नाम दिया गया। यानी जिसे अंग्रेजी में सेक्स या हिन्दी में लिंग कहते हैं, वह प्राकृतिक विभेद बताने के लिए है और यह सिर्फ़ शारीरिक अंग तक सीमित है। महिला आंदोलन और अध्ययन के नज़रिये से हिन्दी में अलग करने के लिए हम 'सेक्स' को प्राकृतिक लिंग कहते हैं। यानी स्त्री और पुरुष के बीच का प्राकृतिक फ़र्क़। यह फ़र्क़ शारीरिक बनावट में है। सामाजिक तौर पर जो फ़र्क़ देखे जाते हैं, उसका इस 'लिंग' से लेना–देना नहीं है। मगर इस विभेद को आधार बनाकर, किसी लड़के और लड़की की पैदाइश के बाद जो विभेद खड़े किए जाते हैं, वह प्राकृतिक नहीं है। वह सामाजिक सोच की देन है। यही सामाजिक विभेद ***जेण्डर*** कहलाता है। इसीलिए सामाजिक फर्क़ को समझने के लिए एक अलग वर्गीकरण किया गया, जिसे 'जेण्डर' का नाम दिया गया। जेण्डर यानी स्त्री और पुरुष के बीच सामाजिक गैरबराबरी का आईना। क्यों? यह बात हमारे कुछ पल्ले पड़ी? नहीं तो हम दोबारा समझते हैं। है न?

हमारे समाज की संरचना इसी जेण्डर विभेद पर आधारित है। इसकी जड़ में हम मर्दों की सत्ता है। जैसे, बेटे की चाह, लिंग चयन और लिंग जानकर गर्भपात, पढ़ाई–लिखाई में फ़र्क़, सामाजिक कामों में स्त्रियों को पुरुषों से नीचा दर्ज़ा, हर क्षेत्र में इस बिना पर भेदभाव कि कोई स्त्री है और कोई पुरुष। मर्दों के ऐसे विचार को ***पितृसत्ता*** और जो समाज इस विचार से चलता है उसे ***पितृसत्तात्मक समाज*** कहते हैं। जेण्डर का विचार इस पितृसत्तात्मक सामाजिक भेदभाव को समझने का नजरिया देता है।

इसी तरह जिहाद वह नहीं है, जो आम तौर पर समझा जाता है। यानी ख़ून ख़राबा, हमला, आतंक। जिहाद यानी कोशिश करना। सबसे बड़ा और अच्छा जिहाद ख़ुद के अंदर बदलाव की कोशिश करना है। अपनी बुराइयों पर काबू पाना, अपनी कमज़ोरियों को दूर करना, अपने को बेहतर इंसान बनाने की कोशिश करना।

इसलिए *जेण्डर जिहाद*। यानी जेण्डर संवेदनशीलता के लिए एक कोशिश। स्त्री और पुरुष के बीच सामाजिक गैर बराबरी दूर करने की जद्दोजहद। एक ऐसा समाज बनाने की कोशिश, जिसमें किसी के साथ इस बिना पर फ़र्क़ नहीं किया जाएगा कि वह खास लिंग का है। चूंकि जेण्डर गैरबराबरी का, पिदरशाही या पितृसत्ता की शक्ल में मजबूत वैचारिक आधार है, इसलिए इससे लड़ने का हथियार भी वैचारिक ही होगा। जेण्डर जिहाद का औज़ार, सोच-

विचार की दुनिया में पितृसत्ता को चुनौती देने की है। इसका मक़सद हर तरह के सामाजिक आतंक को दूर करना है। चाहे वह आतंक पितृसत्ता का ही क्यों न हो।

एक ऐसा समाज, जो जेण्डर बराबरी पर खड़ा हो, वह बिना पुरुष जाति की भागीदारी के मुमकिन नहीं। अगर विभेद की जड़ में पितृसत्ता है यानी पुरुषों की सत्ता है तो इसका इलाज बिना पुरुषों की भागीदारी के कैसे मुमकिन है? जो चीज़ प्रकृति ने नहीं दी यानी सामाजिक विभेद और ग़ैरबराबरी, वह दुरुस्त की जा सकती है। वह दुरुस्त हो सकती है। उसे दुरुस्त होना ही चाहिए। स्त्रियों के साथ भेदभाव का रिश्ता मर्दों के सामाजिक आचार-व्यवहार में भी दिखता है। कई समस्याओं की वजह उनके व्यवहार होते हैं, जिनकी जड़ मर्दिया सोच में है।

हालाँकि स्त्री जाति के साथ सभी मर्द ऐसा ग़ैरबराबरी का सुलूक नहीं करते। यानी बाकि मर्द भी ऐसे बन सकते हैं। मौक़ा मिले तो सभी लड़कियाँ वह काम करती हैं जो लड़के करते हैं। तो सभी लड़कियों को लड़कों जैसा मौका मिले, इसके लिए भी मर्दों को साझीदार बनना पड़ेगा। पार्टनर बनना पड़ेगा। उसे अपने नज़रिए में आमूल बदलाव लाना होगा। ... और इस ओर पहला क़दम होगा- स्त्री को भी अपनी तरह इंसान मानना। दिल-दिमाग़ वाला इंसान मानना। उसे हर क्षेत्र में अपने बराबर का हक़ देना।

ऐसा करके हम मर्द स्त्री जाति पर कोई अहसान नहीं करेंगे। हम अपनी ज़िंदगी और समाज को ख़ुशनुमा बनाने की कोशिश करेंगे।

ऐसा नहीं है कि मर्द हिंसा के शिकार नहीं होते। बाज़ारों, दफ़्तरों में, काम की जगहों पर हम भी कई बार ग़ैरबराबरी और हिंसा के शिकार होते हैं। ज़रा सोचिए उस वक्त हम मर्दों को कैसा लगता है। ठीक वैसा ही या उससे ज़्यादा बुरा स्त्रियों को भी लगता है, जब वे घर के अंदर और बाहर भेदभाव और हिंसा की शिकार होती हैं।

हिंसा कहीं भी हो, किसी के साथ हो, बुरी है। इसलिए अगर ज़िंदगी, परिवार, घर, समाज और मुल्क को तरक़्क़ी की राह पर ले जाना है तो भाइयो, हमें आगे आना होगा। पार्टनर, भागीदार, साझीदार, दोस्त बनकर कदम ब कदम आगे बढ़ाना होगा।

क्या हम तैयार हैं? या हम अपने पुरखों के नक्शे क़दम पर चलते हुए स्त्री माने पैर की जूती ही मानते रहेंगे?

हाँ, एक बात हम ज़रूर ध्यान रखें, सदियों से बनाई गई *जूती* अब जूती बनने से इनकार भी कर रही है। वह सोच रही है। सोचना सबसे ख़तरनाक क्रिया है। जानते हैं न?... सोचने की क्रिया, सामाजिक बदलाव की रफ़्तार को कई गुना तेज़ कर देती है। हम मर्द महिलाओं के कंधे से कंधा मिलाकर बदलाव लाने में शामिल हों, यही हमारे लिए बेहतर है। ख़ुशनुमा ज़िंदगी के लिए भी यह ज़रूरी है।

सीमिति और निजी वितरण के लिए...

आज सामाजिक न्याय कि परिकल्पना में एक ऐसी दुनिया की कल्पना की जा रही है जहां हर महिला पुरुष व अन्य को भेदभाव व हिंसा रहित तथा पूर्ण गरिमा के साथ जीने का हक हो। इस सपने को साकार करने के लिए नए सामाजिक मानदण्डों को बनाना होगा जो समता, न्याय व बराबरी पर आधारित हो।

उक्त सामाजिक मानदण्डों को बनाने तथा इसे व्यवहार में लाने के लिए सभी लोगों के साथ तथा विशेष रूप से किशोरों व युवाओं के साथ काम करने की जरूरत पड़ेगी।

जेण्डर समानता तथा न्याय जैसे जटिल मुद्दे पर किशोरों व युवाओं के साथ काम करने के लिए ऐसी सामग्री की जरूरत पड़ती है जो सरल हो तथा रोचक हो। ***प्यार पाना है तो लड़कियों का दिल भी न दुखाना*** किताब हमारी इस जरूरत को पूरी करती है तथा उम्मीद ही नहीं बल्कि पूरा विश्वास है कि जेण्डर समानता व न्याय के सपने को किशोरों व युवाओं के साथ आगे बढ़ाने के लिए मददगार होगी।

सतीश कुमार सिंह, अतिरिक्त निदेशक, सी.एच.एस.जे

नासिरूद्दीन पेशे से पत्रकार हैं और सामाजिक मुद्दों पर लिखते हैं। बतौर कार्यकर्ता वे सामाजिक और खासकर महिला आंदोलन से सक्रिय रूप से जुड़े रहे हैं। इन्हें मीडिया से जुड़ी कई फेलोशिप मिली है जिनके तहत कई शोधपरक काम किए हैं। कई सामाजिक व सांस्कृतिक संगठनों से भी इनका जुड़ाव रहा है। जेण्डर समानता की मुहिम में पुरुषों की भागीदारी के लिए चलने वाले प्रयासों में भी अरसे से जुड़े हैं। इनका लेखन www.genderjihad.in पर भी देखा जा सकता है।

ईमेलः nasiruddinhk@gmail.com